पटना उच्च न्यायालय के न्यायाधिकार में

आपराधिक अपील (एसजे) सं.- 567/2002

विद्वत अपर जिला और सत्र न्यायाधीश,-II (एफ. टी. सी.), छपरा द्वारा सत्र विचारण सं.- 278/1993 (245/2002) में 19.09.2002 में पारित दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध।

==========

जय प्रकाश मिश्रा उर्फ बुचिया, पिता- भुखलाल मिश्रा, ग्राम बेडवालिया, थाना डर्नी, जिला- छपरा के निवासी।

..... अभियुक्त-अपीलार्थी

बनाम्

बिहार राज्य

..... उत्तरदाता

==========

अपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 313

अपीलार्थी-अभियुक्त को निचली अदालत द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 346/511 के तहत दोषी पाते हुये पाँच साल की कठोर सजा सुनाई गयी थी

सुखमीत सिंह बनाम ;(2014)10 एस.सी.सी. 270; अजय सिंह बनाम् महाराष्ट्र राज्य(2007)12 एस.सी.सी. 341 पर भरोसा किया गया।

निर्णित किया गया कि **यदि आवश्यक प्रश्न अभियुक्त के समक्ष नहीं रखें जाते हैं और यदि अ.प्र.सं. के धारा 313 की वैधानिक आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया जाता है, तो माना जाता है कि अभियुक्त के प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ है और यह पूरे विचारण को दूषित करता और इस तरह दूषित विचारण को आधार पर दोषसिद्धि टिकाऊ नहीं है।**

अपीलार्थी को सभी आरोपों से बरी कर दिया जाता है।

पटना उच्च न्यायालय के न्यायाधिकार में

आपराधिक अपील (एसजे) सं.- 567/2002

विद्वत अपर जिला और सत्र न्यायाधीश,-II (एफ. टी. सी.), छपरा द्वारा सत्र विचारण सं.- 278/1993 (245/2002) में 19.09.2002 में पारित दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध।

==========

जय प्रकाश मिश्रा उर्फ बुचिया, पिता- भुखलाल मिश्रा, ग्राम बेडवालिया, थाना डर्नी, जिला- छपरा के निवासी।

..... अभियुक्त-अपीलार्थी

बनाम्

बिहार राज्य

..... उत्तरदाता

==========

उपस्थिति:

अपीलार्थी की ओर सेः- श्री अमित श्रीवास्तव, अधिवक्ता

श्री एन. के. निराला, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर सेः श्री बिनोद बिहारी सिंह, एपीपी।

==========

कोरम- माननीय मुख्य न्यायाधीश.

मौखिक निर्णय

दिनांक 14-10-2017

भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में, संहिता) की धारा 376/511 के तहत अपनी दोषसिद्धि को चुनौती देते हुए और 19 सितंबर, 2002 के फैसले और आदेश के माध्यम से अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश-फास्ट ट्रैक कोर्ट, छपरा द्वारा सत्र विचारण सं.- 278/1993 में उसे पांच साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई, जिसके विरुद्ध यह अपील अपीलार्थी द्वारा दायर की गई है।

अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि 30 मई, 1992 को लगभग 12 बजे वादी पी. डब्ल्यू. 3 (इसके बाद अभियोजिका के रूप में संदर्भित किया गया है) अपने घर से निकला और शौच के लिए अपने घर के पश्चिमी हिस्से में एक बगीचे के पास गई थी। कहा जाता है कि जब अपीलार्थी अभियुक्त ने उसका पीछा किया और उसके बाद उसका हाथ पकड़ लिया और जब उसने उसके साथ जाने से इनकार कर दिया, तो उसने उसका मुँह बंद कर दिया, उसे जमीन पर फेंक दिया और प्रश्नगत अपराध को अंजाम दिया। ऐसा कहा जाता है कि जब उसने शोर मचाया, तो उसकी माँ पी. डब्ल्यू. 1 तेतरी देवी, उसके पिता पी. डब्ल्यू. 2 जस्सु महतो और उसके चाचा पी. डब्ल्यू. 5 छेदी महतो और पी. डब्ल्यू. 4 रामलाल महतो भी मौके पर आए और अपीलकर्ता भाग गए।

कहा जाता है कि यह घटना 30 मई, 1992 को दिन के समय दोपहर लगभग 12 बजे हुई थी और अगले दिन सुबह 31.05.1992 को प्राथमिकी दर्ज की गई थी। एफ. आई. आर. दर्ज करने में देरी का कारण यह तर्क देते हुए दिया गया है कि पंचायत के माध्यम से विवाद के सुलझाने के लिए प्रयास किए जा रहे थे। अपीलार्थी पर मुकदमा चलाया गया और उपरोक्त अपराध के लिए दोषी ठहराया गया, यह अपील किया गया।

प्रश्नगत विचारण के दौरान, अभियोजन पक्ष ने अभियोजक की मां पी. डब्ल्यू. 1 तेतरी देवी, अभियोजक के पिता पी. डब्ल्यू. 2 जस्सु महतो, स्वयं अभियोजिका पी. डब्ल्यू. 3, अभियोजक पी. डब्ल्यू. 5 छेदी महतो, पी. डब्ल्यू. 4 रामलाल महतो, अभियोजक के रिश्तेदार, जो शोर सुनकर मौके पर पहुंचे। पी. डब्ल्यू. 6 रवींद्र मिश्रा एक औपचारिक गवाह हैं, जिन्होंने प्राथमिकी और अन्य दस्तावेजों को साबित किया है, और अंत में, अभियोजन गवाह सं.- 7 के रूप में जांच अधिकारी से भी पूछताछ की गई।

श्री अमित श्रीवास्तव, अपीलार्थी के विद्वान वकील, मुझे गवाहों के बयानों, एफ़. आई. आर. और फ़र्बीयन, प्रदर्श 1, 2 और 3 अभियोजिका का बयान और यह कहने के लिए भौतिक विसंगतियों को इंगित किया कि यह सहमति और उसके बाद वापस लेने का मामला है। इसके अलावा, उनका तर्क है कि वास्तव में, यह अपीलार्थी के मिथ्यारोप का मामला है और घटना हुई ही नहीं है। उन्होंने आगे बताया कि उनके बयान में, पी. डब्ल्यू. 3 और अपने साक्ष्य में, पी. डब्ल्यू. 2, अभियोजक के पिता, अभियोजक का डॉक्टर द्वारा अस्पताल में इलाज किए जाने और उसे चार दिनों के लिए अस्पताल में भर्ती किए जाने के बारे में स्वीकार करते हैं, लेकिन आश्चर्य की बात है कि मामले में न तो चिकित्सा साक्ष्य या अभियोजक का इलाज करने वाले डॉक्टर की जांच की गई है। तदनुसार, श्री अमित श्रीवास्तव का तर्क है कि यह एक ऐसा मामला है जिसमें अभियोजन पक्ष ने अपने मामले को उचित संदेह से परे साबित नहीं किया है और अपीलार्थी को लाभ दिया जाना चाहिए।

इसके विपरीत, श्री श्री बिनोद बिहारी सिंह, राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान ए. पी. पी., मुझे पी. डब्ल्यू. 3 के रूप में दर्ज अभियोजिका के बयान पर ले गए और तर्क दिया कि अभियोजक का बयान विश्वसनीय है, ऐसा कोई कारण नहीं है कि वह अपीलार्थी को गलत तरीके से फंसायेगी और इसलिए, दोषसिद्धि को बरकरार रखा जाना चाहिए।

मैंने पक्षों के विद्वान वकील को विस्तार से सुना है और अभिलेख का अध्ययन किया। अभिलेख के अवलोकन पर, यह देखा गया है कि प्रश्नगत एफ. आई. आर. स्वयं अभियोजक द्वारा दर्ज की गई है। एफ़. आई. आर. अभिलेख में **Ext**.-1 के रूप में उपलब्ध है और आम

तौर पर एफ़. आई. आर. में दिए गए बयान को तब तक सही माना जाता है जब तक कि अन्यथा साबित न हो जाए क्योंकि यह अपराध के संबंध में दी गई सबसे शुरुआती जानकारी है और माना जाता है कि यह सही तस्वीर देती है कि घटना कैसे हुई और जब शिकायतकर्ता अभियोजक द्वारा स्वयं एफ़. आई. आर. दर्ज की जाती है, तो एफ़. आई. आर. में दिए गए कथन और बयान महत्वपूर्ण हो जाते हैं। यदि अभियोजक द्वारा दर्ज कराई गई प्राथमिकी पर ध्यान दिया जाता है, तो वह शौच करने के लिए दोपहर 12 बजे घर से निकलने के बारे में बात करती है, अपीलकर्ता उसका हाथ पकड़ने की कोशिश करते हुए बगीचे में उसका पीछा करता है और उसके बाद, उसे जमीन पर गिराता है, उसके शरीर पर चढ़ता है, फिर अपना कपड़ा उतारने की कोशिश करता है, उसी समय, वह शोर करती है और पीडब्लू 1,2,4 और 5 घटना स्थल पर आते हैं और अपीलकर्ता भाग जाता है।

एफ. आई. आर. के रूप में दर्ज इस बयान में, अभियोजक ने कहीं भी यह नहीं कहा है कि प्रश्नगत अपीलार्थी ने जबरन उसके कपड़े उतार दिए, अपने गुप्तांग को उसके गुप्तांग में डाल दिया और अपराध को अंजाम दिया। कहानी का यह हिस्सा उनके द्वारा विकसित किया गया है और साढ़े तीन साल से अधिक समय के बाद पहली बार अदालत में बनाया गया है जब उनका बयान 09.09.1998 को अदालत में दर्ज किया गया था। ऐसा होने पर, अभियोजक के साथ बलात्कार की कहानी और गुप्त भाग में प्रवेश की कहानी संदिग्ध हो जाती है। इसके अलावा, अभियोजक अपनी जिरह में स्वीकार करता है कि उसने एक फ्रॉक और पैंट पहनी हुई थी और इस बारे में कुछ नहीं बतायी कि कैसे और किन परिस्थितियों या तरीके से, पैंट को उतारा गया था। इसके अलावा, वह पैरा 6 में अपनी जिरह में स्वीकार करती है कि उसके गुप्त भाग से खून निकला था, उसके कपड़े पर वीर्य उपलब्ध था और उसे इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया जहां उसे भर्ती कराया गया और चार दिनों तक इलाज जारी रखा गया। अस्पताल में उसके इलाज के संबंध में अभियोजक के इस बयान की पुष्टि उसके पिता पी. डब्ल्यू. 2 के बयान से होती है, जो अपने साक्ष्य में अपनी बेटी का अस्पताल में डॉक्टर दिलीप बाबू द्वारा इलाज किए जाने के बारे में बताते हैं। उनका यह भी कहना है कि इलाज सरकारी अस्पताल में हुआ था और उनके पास कागजात उपलब्ध थे।

आश्चर्य की बात है कि न तो अभियोजक का इलाज करने वाले डॉक्टर और न ही चिकित्सा दस्तावेज रिकॉर्ड में उपलब्ध हैं। यह एक ऐसा मामला है जिसमें केवल अभियोजक की मौखिक गवाही के आधार पर, जो प्रकृति में विरोधाभासी भी पाई जाती है, बिना किसी चिकित्सा साक्ष्य या अन्य सामग्री के, जैसे कि अभियोजक का कपड़ा, अपीलार्थी का कपड़ा, जिसे जब्त नहीं किया गया है, और किसी अन्य फोरेंसिक, वैज्ञानिक या चिकित्सा परीक्षा के आधार पर, दोषसिद्धि का आदेश दिया जाता है। अभियोजन पक्ष के मामले में ये महत्वपूर्ण खामियां हैं जो लगाए गए आरोपों के संबंध में गंभीर संदेह पैदा करता है और इसलिए, यह एक ऐसा मामला है जिसमें अभियोजन पक्ष का मामला उचित संदेह से परे साबित नहीं हुआ है।

इसके अलावा, निचली न्यायालय द्वारा किए गए विचारण में एक और गंभीर कमी है जिसके तहत पूरे विचारण को दूषित करता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत आरोपी का बयान दर्ज करते समय, उसके सामने केवल ये सवाल रखे जाते हैं कि (1) क्या उसने अभियोजन पक्ष के साक्ष्य को सुना है; (2) उसके खिलाफ दिए गए साक्ष्य के संबंध में उसका क्या कहना है?और (3) क्या वह उस अपराध के लिए दोषी नहीं है जो उसके द्वारा किया गया था?

सुखजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य [(2014) 10 एस. सी. सी. 270] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय, **रणवीर दव बनाम बिहार राज्य [(2009) 6 एस. सी. सी. 595]; तारा सिंह बनाम राज्य [ए. आई. आर. 1951 एस. सी. 441]; हाटे सिंह भगत सिंह बनाम बिहार राज्य** मध्य भारत राज्य [ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 468] और अजय सिंह बनाम महाराष्ट्र राज्य [(2007) 12 एस. सी. सी. 341] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा करने के बाद, यह सिद्धांत निर्धारित किया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 की आवश्यकता अभियुक्त का ध्यान उसके खिलाफ उपलब्ध विशिष्ट बिंदुओं, सामग्रियों और साक्ष्यों की ओर आकर्षित करना है, उन्हें उसके सामने रखना है और उसी के लिए स्पष्टीकरण मांगना है।

अजय सिंह (उपरोक्त) के मामले में, अनुच्छेद 14 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के प्रावधानों के अनुपालन के लिए अपनाए जाने वाले सिद्धांत निम्नलिखित तरीके से निर्धारित किया है।

"14.उप-धारा (1) (बी) में "आम तौर पर" शब्द पूछताछ की प्रकृति को मामले से संबंधित सामान्य प्रकृति के एक या अधिक प्रश्नों तक सीमित नहीं करता है, लेकिन इसका अर्थ है कि प्रश्न आम तौर पर पूरे मामले से संबंधित होना चाहिए और इसके किसी विशेष भाग या भाग तक भी सीमित होना चाहिए। प्रश्न को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए ताकि अभियुक्त को यह पता चल सके कि उसे क्या समझाना है, कौन सी परिस्थितियाँ उसके खिलाफ हैं और जिसके लिए स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। इस धारा का सम्पूर्ण उद्देश्य अभियुक्त को उन परिस्थितियों को, जो उसके विरुद्ध प्रतीत होती हैं, स्पष्ट करने का सुन्दर और उचित अवसर प्रदान करना है और यह कि प्रश्न निष्पक्ष होने चाहिए और उन्हें ऐसे रूप में लिखा जाना चाहिए जिसे कोई अज्ञानी या अशिक्षित व्यक्ति भी मूल्यांकन कर सकें एवं समझ सके। जिस बात की व्याख्या करने के लिए उसे कभी नहीं कहा गया था, उसे समझाने में आरोपी की विफलता के आधार पर दोषसिद्धि कानूनी रूप से गलत है। संहिता की धारा 313 को अधिनियमित करने का पूरा उद्देश्य यह था कि अभियुक्त का ध्यान आरोप के विशिष्ट बिंदुओं और उन साक्ष्यों की ओर आकर्षित किया जाना चाहिए जिन पर अभियोजन पक्ष दावा करता है कि अभियुक्त के खिलाफ मामला बनाया गया है ताकि वह ऐसा स्पष्टीकरण दे सके जो वह देना चाहता है। **"**

उपरोक्त पर विचार करने के बाद, सुखजीत सिंह (उपरोक्त) के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय का कहना है कि यदि आवश्यक प्रश्न अभियुक्त के समक्ष नहीं रखे जाते हैं और यदि धारा 313 अ.प्र.सं. की वैधानिक आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया जाता है, तो माना जाता है कि अभियुक्त के प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ है और यह पूरे विचारण को दूषित करता है और इस तरह के दूषित विचारण के आधार पर दोषसिद्धि टिकाऊ नहीं है।

यदि उपरोक्त सिद्धांत वर्तमान मामले में भी लागू होता है और यदि आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज किए गये अपीलार्थी के बयान पर ध्यान दिया जाता है, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि पूरा विचारण दूषित हो गया है। इस आधार पर भी, कि कानून की स्थिति होने के कारण, यह एक उपयुक्त मामला है जहाँ अपील की अनुमति दी जानी चाहिए और अपीलार्थी को बरी कर दिया जाना चाहिए।

तदनुसार, अपील की अनुमति दी जाती है। अपीलार्थी को सभी आरोपों से बरी कर दिया जाता है। उसके जमानत मुचलके को खारिज कर दिया जाए और मुक्त कर दिया जाए।

(राजेन्द्र मेनन, मुख्य न्यायाधीश)

सुनील/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।